प्रश्नः- न्यायिक सक्रीयता (Judicial Activism) से आप क्या समझते हैं ? निर्णीत वादों के हवालों से इसकी व्याख्या कीजिए ।

Q.:- What do you mean by judicial activism ?Discuss it by decided cases.

उत्तरः- **न्यायिक सक्रीयता (Judicial Activism):-** न्यायिक सक्रीयता की अवधारणा अमेरिका से ली गई है भारतीय संविधान में न्यायिक सक्रीयता शब्द की कहीं भी परिभाषित नहीं किया गया फिर भी न्यायालयों ने अपने अधिकारों का प्रयोग करते हुए न्याय से सम्बन्धित उल्लेखनीय कार्य किये जो न्यायिक सक्रीयता की एक मिसाल है ।

न्यायिक सक्रीयता की आवश्यकता क्यों ? - इधर दो दशकों से न्यायिक सक्रीयता का महत्व काफी बढ़ गया है क्योंकि प्रजातान्त्रिक देश में जनता सरकार पर निर्भर करती है तथा प्रजातान्त्रिक देश (Democratic Country) में जनता द्वारा बनायी गई जनता की सरकार होती है । ऐसी परिस्थितियों में जब कानून का सही ढ़ंग से संचालन तथा जनता के अधिकार का पालन उचित तरीके नहीं हो पाता है तो ऐसे में भारतीय नागरिक अथवा देश के नागरिक न्यायपालिका का आश्रय लेते हैं तो ऐसी परिस्थितियों में न्यायपालिका अपने अधिकार का पालन जो कि निर्वाचन का अधिकार है का पालन करते हुए नागरिकों के अधिकार दिलाना अथवा न्याय करके अपनी सक्रीयता का परिचय देती है इस प्रकार जब नागरिकों के अपने अधिकार वंचित होने से बचाने में न्यायपालिका जो भूमिका न्याय द्वारा अदा करती है उसे न्यायिक सक्रीयता करते हैं अतः ऐसी ही परिस्थितियों में न्यायिक सक्रीयता (Judicial Activism) की आवश्यकता पड़ती है ।

न्यायिक सक्रीयता (Judicial Activism) वर्तमान न्याय प्रणाली की एक आवश्यकता बन गया है जिसके कारण न्यायालयों ने समय-समय पर निम्नलिखित केसों में न्यायिक सक्रीयता दिखाया है -

(1)

मेनका गांधी (Menka Gandhi) बनाम भारत संघ, A.I.R. 1978 S.C.

वाद का मुख्य बिन्दु (Main points of Disputes):- यह के संविधान के अनु0 21 प्राण एवं दैहिक स्वतन्त्रता से सम्बन्धित है इस केस का मुख्य बिन्दु था कि श्रीमती मेनका गांधी का पासपोर्ट ज़ब्त कर लिया गया था तथा उनहें विदेश भ्रमण करने से केन्द्रीय सरकार द्वारा मना कर दिया गया था ।

प्राण एवं दैहिक स्वतन्त्रता एक मौलिक अधिकार (Life & Personal liberty as Fundamental rights):- भारतीय संविधान के अनु0 21 में प्राण एवं दैहिक स्वतन्त्रता (Life and Personal liberty) को नागरिकों के मूल अधिकार के रूप में परिभाषित किया गया है । किसी को बिना किसी युक्ति युक्त कारण के उसको अपने अधिकार (मौलिक अधिकार) से बाधित नहीं किया जा सकता है । अर्थात भ्रमण करने का अधिकार एक मौलिक

AVADH LAW COLLEGE

अधिकार है । उक्त केस में वादी को बिना किसी युक्ति-युक्त कारण के वंचित नहीं किया जा सकता है ।

<u>मेनका गांधी के केस का तथ्य (fact of Menka Gandhi's case):-</u> इस केस में मुख्य तथ्य यह है कि मेनका गांधी को विदेश भ्रमण करने से मना कर दिया गया था तथा अयुक्तियुक्त तरीके से उनके पासपोर्ट को ज़ब्त कर लिया गया था ।

<u>उच्चतम नयायालय द्वारा दिया गया निर्णय (Judgment by Supreme Court):-</u>उच्चतम न्यायालय के सम्मुख अनु0 21 से सम्बनिधत महत्वपूर्ण मामला जो वयक्ति के प्राण एवं दैहिक स्वतन्त्रता से सम्बन्धित था । इस केस में उच्चतम न्यायालय ने Mann vs Iliyanayas 1905 "Amerika" के केस का हवाला देते हुए निर्णय दिया प्राण एवं दैहिक स्वतन्त्रता का अर्थ बहुत सीमित नहीं लगाना चाहिए उन्होंने अपने निर्णय *नैसर्गिक नयाय (Natural Justice) को सम्मिलित करते हुए कहा कि प्राण एवं दैहिक* स्वतन्त्रता का अर्थ बहुत व्यापक है जिसमें भ्रमण करने का अधिकार शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार व्यापार करने का अधिकार आदि सम्मिलित हैं, इसलिए इन अधिकारों से व्यक्ति नागरिकों के मौलिक, मानसिक तथा आर्थिक आदि विकास सम्भव हो सकेगा यह अधिकार नागरिकों का मूल अधिकार है । मेनका गांधी का पोसपोर्ट ज़ब्त करना तथा भ्रमण करने से रोकना अयुक्तियुक्त मौलिक अधिकार का हनन है अर्थात बिना युक्तियुक्त कारण के किसी व्यक्ति को उसके अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता है । परन्तु यह अधिकार आत्यन्तिक (Absolute right) नहीं है ।

न्यायिक सक्रीयता का एक अच्छा उदाहरण -

<u>एम0सी0 मेहता बनाम भारत संघ, A.I.R. 1987 S.C.</u>न्यायिक सक्रियता का यह केस एक अच्छा उदाहरण है क्योंकि उचचतम नयायालय ने अपनी सक्रियता का परिचय देते हुए Ryland vs flechor के केस में justice Blackburn 1868 द्वारा प्रतिपादित (Rule of strict liability) कठोर दायित्व के सिद्धान्त का अनुसरण न करते हुए **पूर्ण दायित्व का सिद्धान्त** (Rule of absolute liability) के सिद्धान्त प्रतिपादित किया जिसका अर्थ है कि जो कोई व्यक्ति कोई खतरनाक वस्तु अपने भूमि या परिसर में रखता है तथा उससे किसी को क्षति होती है तो उसके लिए वह पूर्णरूप से उत्तरदायी होगा तथा उसे किसी प्रकार का बचाव (अपवाद) का सहारा नहीं मिलेगा । उच्चतम न्यायालय ने यह सिद्धान्त इसलिए प्रतिपादित किया कि कठोर दायित्व के सिद्धान्त में जो अपवाद दिये गये थे उससे प्रतिवादी प्रायः वच जाया करता था ।

<u>निष्कर्ष (conclusion) :-</u> इसप्रकार यह कहा जा सकता है कि इधर दो दशक से न्यायिक सक्रियता का काफी तेज़ी से विकास हुआ है जिस से नागरिकों के अधिकारों का हनन नहीं हो पाता तथा उन्हें न्याय मिलने की अधिक सम्भावनाऐं हो जाती हैं ।

AVADH LAW COLLEGE

प्रश्न:- "अर्थान्वयन अमान्य से मान्य करना अच्छा है", विवेचना कीजिऐ ।

Q.:- "Ut-res magis valeat quam pereat" Explain.

उत्तर:-अर्थान्वयन अमान्य से मान्य करना अच्छा है (Ut-res magis valeat quam pereat) :- जहां पर दो अनुकल्प अर्थान्वयन सम्भव हों, तो ऐसी स्थिति में न्यायालय को उस अर्थ को चुनना चाहिए जो उस पद्धति को, जिसके लिए उस कानून को पारित किया गया है, बनाये रखकर कार्य करता रहे, न कि ऐसे जिनसे कि उन्हें अपनाने में अड़चनें आयें । किसी उपबन्ध अथवा अभिव्यक्ति के दोनों अर्थों अथवा निर्वाचनों में से वह जो सीमित हों तथा जिनसे विधान का उद्देश्य अथवा विधायिका का आशय स्पष्ट नहीं हो पा रहा हो, उसे स्वीकार किया जाना चाहिए तथा ऐसे निर्वाचन का अनुसारण किया जाना चाहिए जिसका परिणाम प्रभावकारी हो तथा जो उचित हो । इस सिद्धान्त को "अमान्य से मान्य करना अच्छा है" का नियम भी कहा जाता है ।

<u>मूथू गोन्डर बनाम पेरियन्न गोण्डर, A.I.R. 1982, S.C. 137</u> के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा अवधारित किया गया है कि किसी भी संविधि की व्याख्या करते समय न्यायालय को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह व्याख्या उस संविधि के उद्देश्य की पूर्ति करने वाली न हो, न कि उसे विफल करने वाली ।

<u>धूम सिंह बनाम प्रकाश चन्द सेठी, A.I.R. 1975, S.C. 1012</u> के मामले में विजयी घोषित प्रत्याक्षी, जो कि अभियर्थी था ।

प्रश्न:- अर्थान्वयन साहचर्येण ज्ञायते का सिद्धान्त क्या है ? इसकी विवेचना निर्णीत वादों की सहायता से कीजिऐ ।

Q.:- What is the principal of Noscitur a sociis ? Explain this with the help of some decided cases.

उत्तर:-<u>अर्थानवयन साहचर्येण ज्ञायते (Noscitur a sociis):-</u> लैटिन शब्द <u>'नॉसिटर'</u> का अर्थ जनता तथा <u>'सोसायस'</u> का तात्पर्य साहचर्य अथवा सहयोजन हैं । इस प्रकार 'नॉसिटर और सोसायस' का तत्पर्य साहचर्य द्वारा जनता हैं । जब दो या दो से अधिक ऐसे शब्द जिनके अर्थ सदृश अथवा एक हों एवं दोनों का प्रयोग एक साथ किया गया हो तो उन्हें उनके सजातीय अर्थ में ज्ञात किया जाना चाहिए । वे अपना रंग आपस में एक-दूसरे से ग्रहण करते हैं । जिससे उनमें से अधिक साधारण शब्द का अर्थ कम साधारण शब्द के सदृश अर्थ में निर्बन्धित हो जाता है । किसी शब्द को उसकी संगति में कौन हैं, से जाना जा सकता है

AADHAR LAW COLLEGE

साहचर्यित शब्द परस्पर व्याख्या तथा सीमित करते हैं । यह सिद्धान्त विधायिका के वास्तविक आशय को प्राप्त करने में सहायक होने के कारण उस जगह अभिभावी नहीं हो सकता, जहां यह स्पष्ट हो कि जान-बूझकर व्यापक शब्दों का प्रयोग किया गया है ।

यह सिद्धान्त यह सुव्यवस्थित करता है कि एक ही शब्द के अर्थ पूरी संविधि की विषय-सूची से संग्रह किय जा सकते हैं । इस सिद्धान्त को सम्बन्द्ध-शब्द सिद्धान्त भी कहते हैं, जो संदिग्ध शब्दों के अर्थ को सुनिश्चित करने में सहायक होते हैं । परन्तु यह सिद्धान्त ऐसी स्थिति में लागू नहीं होता है जहां विधायिका का आशय स्पष्ट एवं संदिग्ध होता हैं । यदि किसी संविधि में किसी शब्द का अर्थ जान-बूझकर विस्तृत दिया गया हो तो वहां उस शब्द का अर्थ को संकुचित करने में इस सिद्धान्त का प्रयोग किया जा सकता है ।

<u>मैसर्स रोहित पल्प एण्ड पेपर मिल्स लि0 बनाम कलेक्टर ऑफ सेण्ट्रल ऑफ एक्साईज, बड़ौदा,</u> A.I.R. 1991, S.C. 754 के मामले में उच्चतम न्यायालय के द्वारा अवधारित किया गया है कि सिद्धान्तों एवं पूर्व निर्णयों का प्रयोग यान्त्रिक तरीके से नहीं किया जा सकता । वे तभी तक सहायक हैं जब तक वे मार्ग-दर्शक हैं और सामान्य भाव के सिद्धान्त एवं तर्क का सारांश बताते हैं ।

प्रश्नः- संजाति अर्थान्वयन के सिद्धान्त से आप क्या समझते हैं ? इसकी विवेचना निर्णीत वादों की सहायता से कीजिए ।

Q.:- What do you understand by the principle 'Edjusdem generis' ? Discuss it with the help of decided cases.

<u>उत्तरः-सजाति अर्थान्वयन (Edjusdem Generis) :-</u> **'एजुस्डेम जेनेरिस'** एक अभिव्यक्ति है, जिसका तात्पर्य है **'उसी प्रकार का'** । समानयता साधारण शब्दों को, दूसरे शब्दों की भांति उनके प्राकृतिक अर्थ में ही समझना चाहिए जब तक कि सन्दर्भ दूसरे अर्थ ग्रहण करने को बाध्य न करें, परन्तु जब एक साधारण शब्द का प्रयोग एक सुस्पष्ट कोटि के शब्दों के पृष्ठ में लिया गया हो, तो साधारण शब्द को भी उस सुस्पष्ट कोटि के सीमित अर्थ में निर्वाचित किया जा सकता है । साधारण शब्द पूर्ववर्ती विशिष्ट अभिव्यक्तियों से अपना अर्थ लेता है, क्योंकि विधायिका ने एक सुस्पष्ट कोटि के विशिष्ट शब्दों द्वारा ऐसा करने के लिए अपना आशय स्पष्ट कर दिया है । यह सिद्धान्त कम साधारण शब्दों तक ही सीमित है । यदि विशिष्ट अभिव्यक्तियां एक सुस्पष्ट कोटि में नहीं आती हैं, तो इस नियम को लागू नहीं किया जा सकता है ।

यदि कोई साधारण शब्द केवल एक विशिष्ट शब्द का अनुसरण करता है, तो उसएक विशिष्ट शब्द से कोई एक सुंस्पष्ट कोटि नहीं बनती है और इसलिए ऐसी दशा में सजाति अर्थान्वयन का सिद्धान्त लागू नहीं किया जा सकता है, परन्तु अपवाद के रूप में कुछ इस प्रकार के

AVADH LAW COLLEGE

दृष्टान्त भी मिल जाते है जिनमें केवल एकमात्र शब्द की कोटि मानकार इस सिद्धान्त के आधार पर सीमित अर्थ देकर निर्वचन किये गये हैं । यदि प्रयोग किये गये विशिष्ट शब्दों से एक सम्पूर्ण कोटि समाप्त हो जाती है, तो इसका अर्थ यही है कि विधायिका का आशय किसी और विस्तृत अथवा बड़ी कोटि से या जिसे खोजने का प्रयत्न न्यायालय करेगा । सजाति अर्थान्वयन का सिद्धानत का आधार यह है कि सार्विक लागू करने का सिद्धान्त नहीं है । यदि किसी विधान का सनदर्भ इस सिद्धान्त को लागू करने के विरूद्ध हो तो इसे लागू नहीं किया जा सकता है । सजाति अर्थान्यवन के सिद्धान्त का आधार यह है कि यदि विधायिका का आशय साधारण शब्दों को असीमित अर्थ में प्रयोग करना होता तो विधायिका का विशिष्ट शब्दों का प्रयोग करने की कोई आवश्यकता नहीं थी

शैलेन्द्र कुमार श्रीवास्तव बनाम डिप्टी रजिस्ट्रार (एक्ज़ामिनेशन) यूनिवर्सिटी ऑफ इलाहाबाद, A.I.R. 1998, Allahabad 101 के मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के द्वारा अवधारित किया गया है कि जहां संविधि में यह व्यवस्था की गई हो कि सामान्य बातों का सामान्य अर्थ लिया जाये, वहां उनका वैसा ही अर्थ लिया जाना चाहिए । यदि शब्दों की तद्नुकूल व्याख्या नहीं की जाती है तो न्यायालय का आदेश दूषित माना जायेगा

प्रश्नः- संविधियों की व्याख्या में प्रकल्पनाओं का क्या महत्व है ? मुख्य उपधारणाओं की संक्षेप में विवेचना कीजिए ।

Q.:- What is the importance of presumptions in interpretation of statutes ? Explain the main presumptions.

उत्तरः-प्रकल्पना से अभिप्रायः- प्रकल्पना अथवा उपधारणा से अभिप्राय है किसी तथ्य के सम्बन्ध में परिकल्पना कर लेना या अनुमान लगा लेना । यदि कोई व्यक्ति कहीं पर धुआं निकलता हुआ देखता है, तो वह यह परिकल्पना करेगा कि कहीं न कहीं आग अवश्य लगी होगी । कई कार्य ऐसे होते हैं जो उपधारणाओं पर निर्भर करते हैं । संविधिओं में इस सम्बन्ध में कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं होता है । संविधियों की व्याख्या में इन उपधारणाओं की मदद न्यायालय प्राचीन काल से ही लेते रहे हैं ।

मनोरंजनदास बनाम स्टेट वेस्ट बंगाल, A.I.R. 1988, Kolkata 22 के मामले में कलत्ता उच्च न्यायालय द्वारा यह अवधारित किया गया है कि जाहं किसी अधिनियम के अन्तर्गत संविधिक निकायों को शक्तियां प्रदत्त की जाती हैं, वहां यह उपधारणा की जायेगी कि निकायों द्वारा इन शक्तियों का प्रयोग उन सभी कार्यों को पूरा करने के लिए किया जा सकता है, जो उस अधिनियम के उद्देश्यों एवं प्रयोजनों को पूरा करने के लिए आवश्यक हों ।

AADHIL AW COLLEGE